ISSN: 3107-3883 (Online)
Global E-Journal of Social Scientific Research
Vol. 1| Issue 5| May 2025 | pp 58-67

जलवायु परिवर्तन और सतत् विकास एक समग्र पर्यावरणीय परिप्रेक्ष्य

डॉ. समीर लाल
रशियन एन्ड सेंट्रल एशियन स्टडीज़, स्कूल ऑफ इन्टरनैशनल स्टडीज़, जे एन यू
स्रोतः ग्लोबल ई–जर्नल ऑफ सोशल साईंटिफिक रिसर्च
वॉल. 1। संस्करण 5। मई 2025। पृष्ठ संख्या 58–67
प्रकाशकः ग्लोबल सेंटर ऑफ सोशल डायनिमिक रिसर्च
drsameerlal@globalcsdr.com

सारांश

आज का युग पर्यावरणीय संकटों की दृष्टि से अत्यंत संवेदनशील है। औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, जनसंख्या वृद्धि तथा प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन ने पृथ्वी की परिस्थितिकी पर गहरा प्रभाव डाला है। विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक संकट के रूप में उभरा है, जिसका प्रभाव केवल प्राकृतिक वातावरण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक, आर्थिक, स्वास्थ्य एवं राजनीतिक व्यवस्थाओं पर भी व्यापक रूप से प्रभाव डाल रहा है। ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन, वनों की कटाई, जीवाश्म ईंधनों का अत्यधिक प्रयोग और असंतुलित विकास की नीतियाँ इसके मुख्य कारण हैं।

यह शोध–पत्र जलवायु परिवर्तन के वैज्ञानिक कारणों, उसके पर्यावरणीय, जैविक और मानवीय प्रभावों का विश्लेषण करता है। साथ ही यह 'सत्त विकास' (Sustainable Development) की अवधारणा को एक संभावित समाधान के रूप में प्रस्तुत करता है, जो पर्यावरणीय संरक्षण, आर्थिक प्रगति और सामाजिक समावेश्न के बीच संतुलन स्थापित करता है।

भारत जैसे विकासशील देश के लिए यह चुनौती और भी बड़ी है, जहाँ विकास की गति को बनाए रखते हुए परिस्थितिकी को भी संतुलित करना आवश्यक है। इस शोध पत्र में भारत सरकार की विभिन्न पर्यावरणीय नीतियों जैसे राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना (NAPCC), स्वच्छ भारत मिशन, जल जीवन मिशन आदि की भूमिका पर भी प्रकाश डाला गया है। अंततः यह दर्शाता है कि जलवायु परिवर्तन से निपटना केवल वैज्ञानिक या नीतिगत विषय नहीं है, बल्कि यह वैश्विक नागरिकता और मानवीय उत्तरदायित्व का भी प्रश्न है।

इस शोध–पत्र का उद्देश्य न केवल जलवायु परिवर्तन के वैज्ञानिक कारणों और प्रभावों को स्पष्ट करना है, बल्कि यह सत्त विकास को एक दीर्घकालिक समाधान के रूप में प्रस्तुत करते हुए, नीतिगत, तकनीकी और सामाजिक दृष्टिकोणों से इसकी संभावनाओं और चुनौतियों का विश्लेषण भी करता है।

प्रस्तावना

पिछले कुछ दशकों में मानव सभ्यता ने विज्ञान, प्रौद्योगिकी और औद्योगिकीकरण के क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति की है। संचार, परिवहन, चिकित्सा, कृषि और ऊर्जा के क्षेत्र में जो क्रांतिकारी बदलाव आए हैं, उन्होंने मानव जीवन को सुविधाजनक और प्रभावी बनाया है। किंतु इस तेजी से बढ़ती प्रगति की एक बहुत बड़ी कीमत पृथ्वी के पारिस्थितिक संतुलन ने चुकाई है। प्रकृति के संसाधनों का अत्यधिक दोहन, वनों की कटाई, प्रदूषण का बढ़ता स्तर, और कार्बन उत्सर्जन में वृद्धि जैसी मानवीय गतिविधियाँ आज हमें एक भयावह जलवायु संकट की ओर धकेल रही हैं।

जलवायु परिवर्तन 21वीं सदी की सबसे गंभीर वैश्विक चुनौती बन चुका है। तापमान में निरंतर वृद्धि, ग्रीनहाउस गैसों का असंतुलित स्तर, बर्फीले क्षेत्रों में हिमखंडों का तेज़ी से पिघलना, समुद्र के स्तर में बढ़ोत्तरी, और असामान्य मौसम घटनाएँ जैसे – चक्रवात, बाढ़, सूखा, लू आदि इसके प्रत्यक्ष संकेत हैं। इन परिवर्तनों का प्रभाव केवल पर्यावरण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह खाद्य सुरक्षा, जल स्रोतों की उपलब्धता, जैव विविधता, मानव स्वास्थ्य और वैश्विक अर्थव्यवस्था तक फैला हुआ है। कृषि पर इसका नकारात्मक प्रभाव ग्रामीण आबादी की आजीविका को संकट में डाल रहा है, वहीं शहरों में बढ़ता तापमान और प्रदूषण नागरिक जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित कर रहा है।

ऐसे समय में 'सतत् विकास' की अवधारणा एक प्रभावी समाधान के रूप में उभरकर सामने आई है। सतत् विकास न केवल पर्यावरणीय संरक्षण की बात करता है, बल्कि यह आर्थिक समृद्धि और सामाजिक न्याय को भी साथ लेकर चलता है। यह वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति इस प्रकार करने पर बल देता है कि भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं की पूर्ति की क्षमता से कोई समझौता न हो। इसके लिए आवश्यक है कि विकास की नीतियाँ पर्यावरण के अनुकूल हों, संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग हो, और जैव विविधता की रक्षा सुनिश्चित की जाए।

भारत जैसे विकासशील देश के लिए यह चुनौती और भी गहरी है। यहाँ पर एक ओर आर्थिक विकास की तीव्र आकांक्षा है, वहीं दूसरी ओर बड़ी जनसंख्या, संसाधनों की सीमितता और जलवायु परिवर्तन के प्रति संवेदनशीलता जैसे कारक चिंताजनक हैं। हालांकि भारत सरकार द्वारा शुरू की गई योजनाएँ – जैसे राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना (NAPCC), स्वच्छ भारत मिशन, अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन, जल जीवन मिशन इत्यादि, सतत् विकास की दिशा में ठोस कदम हैं।

जलवायु परिवर्तन

परिभाषा

जलवायु परिवर्तन का तात्पर्य पृथ्वी की सामान्य जलवायु प्रणाली में दीर्घकालिक परिवर्तन से है, जो दशकों या शताब्दियों तक के समय में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं। यह परिवर्तन तापमान, वर्षा, पवन प्रणाली, समुद्र स्तर, हिमखंडों के पिघलने तथा मौसमी चक्रों में असामान्य बदलाव के रूप में परिलक्षित होता है। यद्यपि जलवायु में परिवर्तन प्राकृतिक कारणों से भी हो सकता है, परंतु वर्तमान में जो परिवर्तन देखे जा रहे हैं, वे मुख्यतः मानवजनित गतिविधियों का परिणाम हैं। औद्योगिकीकरण, वनों की कटाई, जीवाश्म ईंधनों का अत्यधिक उपयोग तथा अनियंत्रित शहरीकरण जैसे कारक इस परिवर्तन को तेजी से बढ़ा रहे हैं

प्रमुख कारणः

1 ग्रीनहाउस गैसों का अत्यधिक उत्सर्जनः

ग्रीनहाउस गैस जैसे कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2), मीथेन (CH_4), नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O) और जलवाष्प पृथ्वी के वातावरण में सूर्य की गर्मी को बनाए रखती हैं। लेकिन जब इन गैसों की मात्रा संतुलन से अधिक हो जाती है, तो यह 'ग्रीनहाउस प्रभाव' को बढ़ा देती हैं, जिससे वैश्विक तापमान में वृद्धि होती है। यह स्थिति ग्लोबल वॉर्मिंग कहलाती है।

2 जीवाश्म ईंधनों का उपयोगः

कोयला, पेट्रोल और डीजल जैसे जीवाश्म ईंधनों के दहन से वातावरण में भारी मात्रा में CO_2 उत्सर्जित होती है। परिवहन, उद्योग और विद्युत उत्पादन जैसे क्षेत्रों में इसका अत्यधिक प्रयोग जलवायु परिवर्तन में मुख्य योगदानकर्ता है।

3 वनों की कटाईः

वन क्षेत्र न केवल ऑक्सीजन का स्रोत हैं, बल्कि वे वायुमंडल से कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषित करने का कार्य भी करते हैं। वनों की अंधाधुंध कटाई इस संतुलन को नष्ट करती है और कार्बन की सांद्रता बढ़ती है।

4 औद्योगीकरण और नगरीकरणः

आधुनिक उद्योगों से भारी मात्रा में ग्रीनहाउस गैसें, रासायनिक प्रदूषक तथा गर्मी उत्पन्न होती है। इसके साथ ही नगरों में कंक्रीट संरचनाएँ, पेड़ों की कमी और एयर कंडीशनर जैसी तकनीकों का बढ़ता प्रयोग शहरी उष्मा द्वीप (Urban Heat Island) प्रभाव उत्पन्न करता है।

5 कृषि और पशुपालनः

पारंपरिक कृषि पद्धतियों में रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग नाइट्रस ऑक्साइड जैसी गैसें उत्पन्न करता है। वहीं पशुपालन में मवेशियों से निकलने वाली मीथेन गैस जलवायु पर विपरीत प्रभाव डालती है।

6 औद्योगिक कचरे और प्लास्टिक प्रदूषणः

प्लास्टिक अपशिष्ट न केवल भूमि और जल को प्रदूषित करता है, बल्कि उसके निर्माण और निपटान प्रक्रियाओं से भी भारी मात्रा में ग्रीनहाउस गैसें उत्पन्न होती हैं।

7 प्राकृतिक कारणः

यद्यपि मानवजनित कारण मुख्य हैं, फिर भी ज्वालामुखी विस्फोट, सौर गतिविधियों में परिवर्तन तथा समुद्री धाराओं में बदलाव जैसे प्राकृतिक कारण भी जलवायु प्रणाली को प्रभावित करते हैं। लेकिन इनका प्रभाव दीर्घकालिक और सीमित होता है।

जलवायु परिवर्तन केवल एक पर्यावरणीय चुनौती नहीं, बल्कि मानव अस्तित्व के लिए गंभीर संकट है। इसके कारण ों को समझना और नियंत्रित करना अत्यंत आवश्यक है, जिससे पृथ्वी की पारिस्थितिक प्रणाली को संतुलित रखा जा सके।

जलवायु परिवर्तन के प्रभावः पर्यावरणीय परिप्रेक्ष्य

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव आज केवल वैज्ञानिक चर्चा का विषय नहीं हैं, बल्कि ये प्रत्यक्ष रूप से पृथ्वी के पर्यावरण और पारिस्थितिक तंत्रों पर गहरा असर डाल रहे हैं। यह प्रभाव प्राकृतिक संसाधनों, मौसमी चक्रों और पारिस्थितिक संतुलन को अस्थिर बना रहे हैं, जिससे संपूर्ण जैवमंडल संकट में है। नीचे जलवायु परिवर्तन के चार प्रमुख पर्यावरणीय प्रभावों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत हैः

1 ग्लेशियरों का पिघलनाः

ग्लेशियर पृथ्वी के मीठे जल का एक प्रमुख भंडार हैं। विश्व के कई क्षेत्रों में स्थित हिमनद जैसे – हिमालय,

आर्कटिक, अंटार्कटिका आदि में तापमान वृद्धि के कारण तीव्र गति से बर्फ पिघल रही है। यह न केवल वैश्विक समुद्र स्तर में वृद्धि का कारण बन रहा है, बल्कि इससे उन क्षेत्रों में जल आपूर्ति पर संकट उत्पन्न हो गया है, जो इन हिमनदों पर निर्भर हैं। उदाहरण स्वरूप, गंगा, ब्रह्मपुत्र और यांग्त्से जैसी नदियाँ हिमालयन ग्लेशियरों से पोषित होती हैंय इनका पिघलना कृषि, पेयजल और ऊर्जा संसाधनों को प्रभावित करता है।

2 समुद्र स्तर में वृद्धिः

ग्लेशियरों के पिघलने और समुद्रों के तापमान में वृद्धि से जल का आयतन बढ़ता है, जिससे समुद्र स्तर में निरंतर वृद्धि हो रही है। यह विशेषकर तटीय क्षेत्रों के लिए खतरे की घंटी है। समुद्र जल की यह वृद्धि तटीय भूमि के कटाव, बाढ़, और खारे पानी के भूजल में प्रवेश (saline intrusion) जैसी समस्याओं को जन्म देती है। भारत में सुंदरबन क्षेत्र, मुंबई, कोलकाता जैसे शहर समुद्र स्तर की वृद्धि से विशेष रूप से प्रभावित हैं। विश्व बैंक की रिपोर्टों के अनुसार, यदि यही प्रवृत्ति जारी रही तो 2100 तक कई द्वीपीय देशों का अस्तित्व खतरे में पड़ सकता है।

3 मानसून की अनियमितताः

जलवायु परिवर्तन का सबसे प्रत्यक्ष प्रभाव मौसम चक्रों पर पड़ा है। भारत जैसे मानसूनी देशों में वर्षा की मात्रा और समय में असंतुलन बढ़ता जा रहा है। पहले जहां नियमित और संतुलित वर्षा होती थी, अब अनावश्यक भारी वर्षा या लम्बे समय तक सूखा पड़ना आम हो गया है। इससे न केवल कृषि को भारी क्षति पहुँचती है, बल्कि भू–स्खलन, बाढ़ और जल संकट जैसी आपदाएँ भी उत्पन्न होती हैं। मानसून की यह अनिश्चितता खाद्य सुरक्षा और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए गंभीर चुनौती बन चुकी है।

4 मरुस्थलीकरण में वृद्धिः

जलवायु परिवर्तन के कारण सूखे की घटनाओं में वृद्धि हो रही है, जिससे भूमि की उर्वरता घट रही है और मरुस्थलीकरण की प्रक्रिया तेज हो रही है। शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में यह प्रभाव और अधिक स्पष्ट होता है, जैसे राजस्थान और मध्य भारत के कुछ हिस्से। कृषि योग्य भूमि बंजर होती जा रही है, जिससे जैव विविधता का ह्रास, जल संकट और प्रवास की समस्या उत्पन्न हो रही है।

जलवायु परिवर्तन के ये पर्यावरणीय प्रभाव पारिस्थितिक संतुलन को अस्थिर कर रहे हैं। यदि समय रहते इन प्रभावों को नियंत्रित नहीं किया गया, तो यह न केवल पर्यावरण, बल्कि मानव सभ्यता के अस्तित्व के लिए एक गंभीर खतरा बन जाएगा। इसलिए नीति निर्धारकों, वैज्ञानिकों और आम नागरिकों को मिलकर इस दिशा में ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है।

जलवायु परिवर्तन और जैव विविधता पर प्रभाव

जैव विविधता पृथ्वी के जीवन का आधार है, जिसमें पौधों, जीवों, सूक्ष्मजीवों और उनके परिस्थितिकी तंत्रों की विविधता शामिल होती है। यह पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने, भोजन, औषधि, जल और स्वच्छ वायु जैसी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अत्यंत आवश्यक है। किंतु जलवायु परिवर्तन ने जैव विविधता के इस संतुलन को गंभीर रूप से प्रभावित

किया है। तापमान में वृद्धि, वर्षा के स्वरूप में परिवर्तन, समुद्रों के अम्लीकरण और प्राकृतिक आपदाओं की आवृत्ति में वृद्धि ने हजारों प्रजातियों के अस्तित्व को संकट में डाल दिया है।

1 प्रजातियों का लुप्त होना (Extinction of Species):

जलवायु परिवर्तन के कारण अनेक वनस्पति एवं जीव–जंतु प्रजातियाँ उन वातावरणों में जीवित नहीं रह पा रही हैं, जिनमें वे सहस्राब्दियों से फल–फूल रही थीं। जैसे–जैसे तापमान बढ़ रहा है और पर्यावरणीय परिस्थितियाँ बदल रही हैं, कुछ प्रजातियाँ या तो तेजी से कम हो रही हैं या पूर्णतः विलुप्त हो रही हैं।

विशेषकर आर्कटिक क्षेत्र के ध्रुवीय भालू, उष्णकटिबंधीय कोरल रीफ में रहने वाले जीव, तथा भारत में पाए जाने वाले कई हिमालयन पक्षी अब संकटग्रस्त हो चुके हैं। इंटरगवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज (IPCC) की रिपोर्ट के अनुसार, यदि तापमान वृद्धि को 2° तक सीमित नहीं किया गया, तो लगभग 30 प्रतिशत प्रजातियों के विलुप्त होने की संभावना है।

2 परिस्थितिकी तंत्र का असंतुलन (Ecosystem Imbalance):

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव केवल व्यक्तिगत प्रजातियों पर नहीं, बल्कि पूरे परिस्थितिकी तंत्र पर पड़ रहा है। वन, महासागर, आर्द्रभूमियाँ, घास के मैदान जैसे विभिन्न पारिस्थितिक तंत्र जलवायु के अनुसार विकसित हुए हैं। जब तापमान, वर्षा और मौसमी चक्रों में असंतुलन आता है, तो इन तंत्रों में खाद्य श्रृंखलाएँ टूट जाती हैं और जैविक संतुलन बिगड़ जाता है।

उदाहरणस्वरूप, मैंग्रोव वनों का क्षरण समुद्री जैव विविधता पर गंभीर प्रभाव डालता है। कोरल रीफ के विरंजन (bleaching) से हजारों प्रजातियों का आवास समाप्त हो जाता है। इसी प्रकार, वनों की नमी और तापमान में बदलाव से कई कीट, पक्षी और स्तनधारी अपने पारिस्थितिक आवास को खो देते हैं, जिससे उनकी प्रजनन दर और अस्तित्व पर असर पड़ता है।

3 प्रवासी पक्षियों की गतिविधियों में बदलाव (Changes in Migratory Patterns):

प्रवासी पक्षी जलवायु के अनुसार हजारों किलोमीटर की यात्रा करते हैं। ये प्रवास पारंपरिक मौसम चक्रों और भोजन की उपलब्धता पर निर्भर होता है। जलवायु परिवर्तन के कारण तापमान और मौसम में आई अनियमितताओं से उनके प्रवास के समय, मार्ग और गंतव्य में व्यापक परिवर्तन हो रहा है।

उदाहरण के लिए, साइबेरियाई क्रेन और अन्य प्रवासी पक्षियों के आगमन में देरी या कुछ क्षेत्रों में उनकी अनुपस्थिति देखी जा रही है। इससे न केवल उनकी प्रजनन प्रक्रिया बाधित होती है, बल्कि स्थानीय पारिस्थितिक तंत्र में भी असंतुलन उत्पन्न होता है, क्योंकि ये पक्षी कीट नियंत्रण, परागण और बीज फैलाव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

जलवायु परिवर्तन से जैव विविधता पर पड़ने वाले प्रभाव व्यापक और दीर्घकालिक हैं। यदि इन पर तत्काल ध्यान नहीं दिया गया, तो इसका असर केवल पर्यावरण तक सीमित नहीं रहेगा, बल्कि मानव समाज की खाद्य सुरक्षा, आर्थिक स्थिरता और स्वास्थ्य पर भी पड़ेगा। अतः जैव विविधता संरक्षण को जलवायु नीति का अभिन्न अंग बनाना अनिवार्य है।

मानव जीवन पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

जलवायु परिवर्तन केवल पर्यावरणीय संकट नहीं है, बल्कि यह एक मानवीय संकट भी बन चुका है। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव लोगों के जीवन, आजीविका, स्वास्थ्य, भोजन और पानी की उपलब्धता पर पड़ रहा है। विशेष रूप से विकासशील देशों में, जहाँ जनसंख्या अधिक है और संसाधन सीमित हैं, वहाँ इसकी मार और भी अधिक गंभीर होती जा रही है। निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से हम मानव जीवन पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को समझ सकते हैं:

1 कृषि पर विपरीत प्रभावः

कृषि जलवायु पर अत्यधिक निर्भर क्षेत्र है, और भारत जैसे देश में, जहाँ अधिकांश कृषि वर्षा पर आधारित है, वहाँ जलवायु परिवर्तन का प्रभाव बहुत स्पष्ट दिखाई देता है। वर्षा की अनियमितता, सूखा, बाढ़, असमय ओलावृष्टि तथा तापमान में असंतुलन से फसलें समय पर नहीं पकतीं या नष्ट हो जाती हैं। इसके अलावा मिट्टी की उर्वरता में कमी, कीटों और बीमारियों का बढ़ना तथा फसल चक्र में व्यवधान जैसी समस्याएँ बढ़ रही हैं। इससे किसानों की आय प्रभावित हो रही है और कृषि की स्थिरता पर खतरा मंडरा रहा है।

2 खाद्य संकट (Food Insecurity):

कृषि उत्पादन में कमी का सीधा असर खाद्य सुरक्षा पर पड़ता है। जब फसलें प्रभावित होती हैं, तो अनाज, सब्जियाँ और फल महंगे हो जाते हैं, जिससे गरीब और मध्यम वर्ग के लोगों की पोषण संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति कठिन हो जाती है। जलवायु परिवर्तन विशेष रूप से धान, गेहूं, मक्का और दलहन जैसी फसलों की पैदावार को प्रभावित करता है, जो भारतीय भोजन का आधार हैं। इसके अलावा पशुधन और मत्स्य पालन पर भी जलवायु परिवर्तन का नकारात्मक असर देखा जा रहा है। इन सब कारणों से वैश्विक स्तर पर खाद्य संकट (Food Crisis) की संभावना बढ़ती जा रही है।

3 जल संसाधनों में कमीः

जलवायु परिवर्तन का सीधा असर जलवायु चक्र पर पड़ता है, जिससे वर्षा का स्वरूप अनियमित हो गया है। कभी अत्यधिक बारिश से बाढ़ आती है, तो कभी लंबे समय तक सूखा पड़ता है। हिमनदों के पिघलने से प्रारंभ में जल की उपलब्धता बढ़ती है, लेकिन दीर्घकाल में जल स्रोतों का लुप्त हो जाना तय है। भारत में कई नदियाँ जैसे गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र आदि हिमालयन ग्लेशियरों पर निर्भर हैं, और इनका पिघलना भविष्य में जल संकट को और अधिक गंभीर बना सकता है। भूमिगत जलस्तर भी गिरता जा रहा है, जिससे सिंचाई, पेयजल और औद्योगिक कार्यों के लिए पानी की उपलब्धता घट रही है।

4 स्वास्थ्य समस्याएँः

जलवायु परिवर्तन के कारण स्वास्थ्य पर भी गंभीर प्रभाव पड़ रहा है। अत्यधिक गर्मी के कारण लू (heat stroke) और डिहाइड्रेशन जैसी स्थितियाँ आम हो गई हैं। बढ़ते तापमान और वर्षा की अनियमितता से मच्छर जनित रोगों जैसे मलेरिया, डेंगू, चिकनगुनिया और जीका वायरस की घटनाओं में वृद्धि हुई है। बाढ़ और गंदे पानी की समस्या से जल जनित रोग जैसे डायरिया, हैजा भी बढ़ रहे हैं। इसके अतिरिक्त वायु प्रदूषण में वृद्धि से श्वसन संबंधी समस्याएँ, एलर्जी

और अस्थमा जैसी बीमारियाँ भी तेजी से फैल रही हैं।

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव मानव जीवन के हर पहलू पर पड़ रहा है। यह केवल पर्यावरण का मुद्दा नहीं रह गया है, बल्कि आज यह जीवन, स्वास्थ्य, रोजगार, खाद्य और जल सुरक्षा से जुड़ा एक व्यापक सामाजिक, आर्थिक और मानवीय संकट बन गया है। अतः इसके विरुद्ध ठोस और समन्वित प्रयास समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

सतत् विकासः समाधान की दिशा में एक कदम

21वीं सदी में जब मानवता जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक आपदाओं और संसाधन संकट जैसी अनेक चुनौतियों का सामना कर रही है, तब एकमात्र व्यवहारिक और दीर्घकालिक समाधान के रूप में सतत् विकास (Sustainable Development) की अवधारणा सामने आई है। यह अवधारणा न केवल पर्यावरणीय संरक्षण की बात करती है, बल्कि सामाजिक न्याय और आर्थिक प्रगति के बीच संतुलन स्थापित करने पर भी बल देती है।

परिभाषा और उद्देश्यः

संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, ''सतत् विकास ऐसा विकास है जो वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है, बिना भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं की पूर्ति की क्षमता से समझौता किए।'' इसका प्रमुख उद्देश्य एक ऐसा समाज निर्मित करना है, जहाँ विकास पर्यावरणीय संसाधनों के संरक्षण के साथ हो, और सभी वर्गों को समान अवसर उपलब्ध हों।

इसके अलावा भारत ने संयुक्त राष्ट्र के सतत् विकास लक्ष्यों (SDGs) को अपनाकर 2030 तक सतत् विकास हासिल करने का संकल्प लिया है।

सतत् विकास केवल एक नारा नहीं, बल्कि एक रणनीति है जो वर्तमान और भविष्य को जोड़ती है। यह हमें सिखाता है कि आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण एक–दूसरे के विरोधी नहीं, बल्कि पूरक हो सकते हैं। यदि सरकार, उद्योग, समाज और व्यक्ति मिलकर इसे अपनाएँ, तो जलवायु संकट से न केवल निपटा जा सकता है, बल्कि एक स्वस्थ, सुरक्षित और समृद्ध भविष्य का निर्माण भी संभव है।

सतत् विकास के मुख्य स्तंभ

सतत् विकास (Sustainable Development) की अवधारणा केवल पर्यावरण संरक्षण तक सीमित नहीं है। यह एक समग्र दृष्टिकोण है, जिसमें आर्थिक विकास, सामाजिक समावेशन, और पर्यावरणीय संरक्षण–तीनों का संतुलन निहित होता है। इन तीनों स्तंभों के परस्पर सहयोग से ही एक ऐसा विकास संभव है जो दीर्घकालिक, समावेशी और प्रकृति के अनुकूल हो। नीचे इन तीन मुख्य स्तंभों की विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की गई हैः

1 आर्थिक विकासः स्वच्छ ऊर्जा आधारित अर्थव्यवस्था

आर्थिक विकास का उद्देश्य उत्पादन, रोजगार, और जीवन स्तर को ऊँचा उठाना होता है। किंतु पारंपरिक विकास मॉडल, जो जीवाश्म ईंधनों (कोयला, पेट्रोल, डीजल) पर आधारित हैं, ने ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन बढ़ाकर जलवायु संकट को जन्म दिया है।

इसलिए अब आवश्यकता है स्वच्छ ऊर्जा आधारित अर्थव्यवस्था की ओर स्थानांतरित होने की। सौर ऊर्जा, पवन

ऊर्जा, जलविद्युत, बायोमास और हाइड्रोजन जैसे नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों के उपयोग को बढ़ावा देना चाहिए। इसके साथ–साथ हरित प्रौद्योगिकी (Green Technology), ऊर्जा दक्षता, टिकाऊ उद्योगों और ग्रीन जॉब्स (Green Employment) का निर्माण आर्थिक विकास को पर्यावरणीय दृष्टिकोण से सशक्त बना सकता है।

भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय सौर मिशन, इथेनॉल सम्मिश्रण नीति, और ई–वाहन नीति जैसे कदम इस दिशा में सराहनीय पहल हैं।

2 सामाजिक समावेशनः समान संसाधन उपलब्धता

सत्त विकास का दूसरा स्तंभ है सामाजिक समावेशन, जिसका अर्थ है–विकास के लाभ समाज के प्रत्येक वर्ग तक समान रूप से पहुँचें, चाहे वह लिंग, जाति, धर्म, आर्थिक स्तर या भौगोलिक स्थिति के आधार पर कोई भी हो।

वर्तमान समय में ग्रामीण और शहरी, पुरुष और महिला, अमीर और गरीब के बीच संसाधनों की पहुँच में भारी असमानता है। जल, स्वच्छता, शिक्षा, स्वास्थ्य, ऊर्जा और आजीविका जैसे मूलभूत संसाधनों तक सबकी पहुँच सुनिश्चित करना सत्त विकास का मूल लक्ष्य होना चाहिए।

सरकार की योजनाएँ जैसे –

जल जीवन मिशन (हर घर जल)

स्वच्छ भारत मिशन

प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना

दीनदयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना

सभी इस सामाजिक समावेशन को साकार करने की दिशा में ठोस प्रयास हैं।

3 पर्यावरणीय संरक्षणः प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग

तीसरा और सबसे महत्वपूर्ण स्तंभ है पर्यावरणीय संरक्षण, जिसके बिना न तो आर्थिक प्रगति संभव है और न ही सामाजिक स्थिरता। प्राकृतिक संसाधन जैसे जल, भूमि, वन, खनिज और वायु सीमित हैं। यदि इनका अंधाधुंध दोहन किया गया, तो आने वाली पीढ़ियाँ इनसे वंचित रह जाएँगी।

इसलिए हमें चाहिए कि संसाधनों का विवेकपूर्ण और नवीकरणीय उपयोग करें। वर्षा जल संचयन, जैविक कृषि, प्लास्टिक उपयोग में कटौती, कचरा प्रबंधन, और जैव विविधता संरक्षण जैसे उपाय इस स्तंभ को मजबूती प्रदान करते हैं।

"Reduce, Reuse, Recycle" की नीति आज के समय की आवश्यकता है। इसके साथ ही समुदाय आधारित पर्यावरणीय प्रयास और स्थानीय पारंपरिक ज्ञान को प्रोत्साहित करना भी अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगा।

सत्त विकास के ये तीन स्तंभ–आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय—एक त्रिकोण की भांति हैं, जिनमें से किसी एक की उपेक्षा करने पर पूरा ढांचा असंतुलित हो सकता है। इसलिए, नीतियों और योजनाओं में इन सभी पक्षों को संतुलित रूप से शामिल कर ही हम एक हरित, न्यायसंगत और सुरक्षित भविष्य की ओर अग्रसर हो सकते हैं।

निष्कर्ष

वर्तमान युग में जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय संकट केवल वैज्ञानिक या पारिस्थितिक विषय नहीं रह गए हैं, बल्कि ये सामाजिक, आर्थिक और नैतिक चुनौतियाँ बन चुके हैं। इस शोध–पत्र के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि जलवायु परिवर्तन के प्रभाव बहुआयामी हैं–यह न केवल पर्यावरणीय असंतुलन और जैव विविधता को प्रभावित करता है, बल्कि मानव जीवन के हर पहलू को भी गंभीर रूप से प्रभावित कर रहा है।

ग्लेशियरों का पिघलना, समुद्र स्तर में वृद्धि, मौसम की अनियमितता और मरुस्थलीकरण जैसे प्रभाव परिस्थितिकी तंत्र को अस्थिर बना रहे हैं। जैव विविधता में प्रजातियों का लुप्त होना, प्रवासी पक्षियों के व्यवहार में बदलाव और खाद्य श्रृंखला में अवरोध जैसे परिवर्तन दर्शाते हैं कि प्राकृतिक जीवन–चक्र कितनी तेजी से बिगड़ रहा है।

मानव जीवन पर इसका असर और भी व्यापक है—कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव, खाद्य संकट, जल संसाधनों की कमी और स्वास्थ्य समस्याएँ अब आम होते जा रहे हैं। इस संकट से उबरने के लिए केवल पर्यावरणीय दृष्टिकोण पर्याप्त नहीं है, बल्कि हमें एक समग्र नीति अपनानी होगी जिसमें आर्थिक विकास, सामाजिक न्याय और पर्यावरणीय संरक्षण के बीच संतुलन बना रहे।

इस दिशा में सत्त विकास की अवधारणा एक व्यवहारिक समाधान के रूप में उभरकर सामने आई है। यह विकास का ऐसा मॉडल प्रस्तुत करता है जो वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ–साथ भविष्य की पीढ़ियों के अधिकारों की भी रक्षा करता है। इसके तीन स्तंभकृआर्थिक विकास, सामाजिक समावेशन और पर्यावरणीय संरक्षण—परस्पर आपस में जुड़े हुए हैं और एक संतुलित प्रणाली की मांग करते हैं।

सुझावः

1 नीति निर्माण में पर्यावरण को प्राथमिकताः

सरकारों को जलवायु अनुकूल योजनाओं और हरित बजट को बढ़ावा देना चाहिए। सभी विकास परियोजनाओं में पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन अनिवार्य किया जाए।

2 शिक्षा और जन–जागरूकताः

विद्यालय स्तर से ही पर्यावरणीय शिक्षा अनिवार्य की जाए। आम जन में जागरूकता फैलाने के लिए मीडिया, सोशल प्लेटफॉर्म्स और सामुदायिक कार्यक्रमों का उपयोग किया जाए।

3 नवीकरणीय ऊर्जा को बढ़ावाः

जीवाश्म ईंधनों पर निर्भरता कम कर सौर, पवन और जलविद्युत जैसी नवीकरणीय ऊर्जा परियोजनाओं में निवेश बढ़ाया जाए।

4 स्थायी कृषि और जल प्रबंधनः

जैविक खेती, वर्षा जल संचयन, माइक्रो–इरिगेशन और फसल विविधता जैसे उपायों को प्राथमिकता दी जाए।

5 शहरी नियोजन में पर्यावरणीय दृष्टिकोणः

स्मार्ट सिटी योजनाओं में हरित क्षेत्र, सार्वजनिक परिवहन और अपशिष्ट प्रबंधन को अनिवार्य बनाया जाए।

6 स्थानीय समुदायों की भागीदारीः

जनजातीय और ग्रामीण समुदायों के पारंपरिक ज्ञान को पर्यावरण संरक्षण में सम्मिलित किया जाए। सामूहिक वन प्रबंधन और जल संरक्षण कार्यक्रमों में स्थानीय भागीदारी सुनिश्चित की जाए।

समापनः

यदि हम सत्त विकास के सिद्धांतों को ईमानदारी से अपनाएँ, तो न केवल जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों को कम किया जा सकता है, बल्कि हम एक ऐसी दुनिया का निर्माण कर सकते हैं जहाँ पर्यावरण और मानव दोनों का सह–अस्तित्व संभव हो। इस दिशा में समर्पित प्रयास, वैश्विक सहयोग और स्थानीय स्तर पर जागरूक भागीदारी अनिवार्य है।

संदर्भ सूची

1 सिंह, आर. बी. (2022). पर्यावरण अध्ययन. आगराः लक्ष्मी नारायण अग्रवाल।

2 द्विवेदी, ओमप्रकाश (2021). जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय संकट. नई दिल्लीः भारतीय विद्या संस्थान।

3 गुप्ता, एस. पी. (2020). सत्त विकास और पर्यावरण. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।

4 शर्मा, वी. के. (2019). पर्यावरण शिक्षा. मेरठः विनीत पब्लिकेशन।

5 सिंह, एच. एस. (2018). परिस्थितिकी और पर्यावरण. इलाहाबादः नवीन प्रकाशन।

6 अग्रवाल, अनिल एवं नारायण, सुनीता (2020). विकास बनाम पर्यावरण. नई दिल्लीः सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरनमेंट।

7 शर्मा, नीलिमा (2021). जलवायु परिवर्तनः समस्या और समाधान. भोपालः भारतीय पर्यावरण अध्ययन केंद्र।

8 प्रसाद, रामेश्वर (2019). भारत में पर्यावरणीय नीतियाँ. भोपालः हिंदी ग्रंथ अकादमी।

9 नीति आयोग (2023). भारत और सत्त विकास लक्ष्य (SDGs) – भारत रिपोर्ट .2023 नई दिल्लीः नीति आयोग।

10 पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय (MoEFCC) (2023). राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना (NAPCC). भारत सरकार।

11 IPCC (2023). जलवायु परिवर्तन :2023 छठीं मूल्यांकन रिपोर्ट (AR٦). इंटरगवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज।

12 संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन (2015). पेरिस समझौता. यूनाइटेड नेशन्स फ्रेमवर्क कन्वेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज (UNFCCC)।

13 भारतीय मौसम विज्ञान विभाग (IMD) (2023). भारत में जलवायु परिवर्तन की प्रवृत्तियाँ. नई दिल्लीः पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय।